

शिक्षा, शिक्षार्थी और शिक्षण नगरीय अध्यापकों के विश्वास

रवनीत कौर*

अध्यापकों के विश्वास उनकी व्यक्तिगत धारणाओं और मतों को व्यक्त करते हैं, जिसका प्रभाव उनके अभ्यासों पर भी पड़ता है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए इस शोध पत्र में दिल्ली के निजी विद्यालयों में अध्यापन करने वाले अध्यापकों के विश्वासों को प्रस्तुत किया गया है जो शोध अध्ययन पर आधारित है। इस शोध अध्ययन का उद्देश्य यह ज्ञात करना था कि कैसे विद्यालय और शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि अध्यापकों के विश्वासों को निर्धारित करती है? इस शोध अध्ययन के परिणाम बताते हैं कि निजी विद्यालयों के अध्यापक, शिक्षा के लक्ष्यों को शिक्षार्थियों की सामाजिक पृष्ठभूमि, सामाजिक गतिशीलता और मूल्य पोषण के अनुरूप देखते हैं। वे शिक्षार्थियों को समरूप सांस्कृतिक समूह का प्रतिनिधि मानते हैं, जिनमें वैयक्तिक भिन्नता को मनोवैज्ञानिक चरों, जैसे— संज्ञान, रुचि और अभिवृत्ति के संदर्भ में देखते हैं। अध्यापकों के शिक्षणशास्त्रीय विश्वास, व्यावहारवादी अनुशासन एवं प्रबंधन तथा निर्माणवादी शिक्षण के मिश्रित रूप को प्रकट करते हैं। इन्हीं के आलोक में यह शोध अध्ययन दर्शाता है कि सेवारत और सेवा-पूर्व अध्यापकों के विश्वासों को संबोधित करने पर ही उन्हें शैक्षिक सुधारों का अभिकर्ता बनाया जा सकता है।

शिक्षा नीतियों एवं शैक्षिक सुधारों के क्रियान्वयन के लिए अध्यापकों की केंद्रीय भूमिका होती है। यदि हम अपने आसपास स्थानीय स्तर पर देखें तो विद्यालयों की अधिगम-संस्कृति, समुदाय से विद्यालय के संबंध, विद्यालय में समावेशन, शिक्षा के अवसरों की उपलब्धता और शिक्षार्थियों की उपलब्धि पर अध्यापकों की भूमिका का सीधा प्रभाव पड़ता है। अध्यापकों की भूमिका संबंधित दैनिक अवलोकनों से यह भी प्रकट होता है कि अध्यापक केवल शिक्षार्थियों को पढ़ाते ही नहीं, बल्कि वे विद्यालय

के संचालन, पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम के विकास और आकलन की प्रक्रिया के भी भागीदार होते हैं। वे शिक्षार्थियों के साथ मनोसामाजिक संबंध भी विकसित करते हैं और उनका मार्गदर्शन एवं सहयोग करते रहते हैं। प्रायः अध्यापकों की अकादमिक पृष्ठभूमि को उनके सेवा-पूर्व प्रशिक्षण और उनकी शिक्षणशास्त्रीय दक्षताओं व रुचियों आदि को अध्यापकों के निष्पादन के पैमाने के रूप में देखा जाता है और इनके सापेक्ष ही उनकी भूमिका को परिकल्पित किया जाता है। ऐसा माना जाता है

कि ये कारक अध्यापकों के चिंतन और उनके सीखने-सिखाने के तरीकों के निर्धारक होते हैं। इसी कारण अध्यापकों के वेतन व भत्ते, कक्षा में उनकी उपस्थिति, विषय के प्रति अभिरुचि, शिक्षणशास्त्रीय दक्षताओं के आधार पर उनके शिक्षण अभ्यास की व्याख्या करने वाले अनेक शोध कार्य हुए हैं।

हाल के कुछ वर्षों में यह पाया गया है कि उक्त परंपरागत कारकों के साथ-साथ अध्यापकों के विश्वास, धारणाएँ और परिप्रेक्ष्य भी उनके शिक्षण के अभ्यास को प्रभावित करते हैं (क्लार्क 2003, ब्रिंकमैन, 2015)। पिछले कुछ वर्षों से अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापकों के विश्वास का अध्ययन एक महत्वपूर्ण शोध क्षेत्र के रूप में उभरा है। यह माना जाता है कि यदि शिक्षण की प्रक्रिया को अध्यापकों की दृष्टि से समझना है और उसमें सुधार से संबंधित अदृश्य कारकों का निवारण करना आवश्यक है तो इस हेतु अध्यापकों के विश्वासों का अध्ययन करना भी एक महत्वपूर्ण घटक है। इसके साथ-साथ यह भी ध्यान रखना है कि स्वाभाविक एवं नियमित दिनचर्या से जुड़े परिवेश में अध्यापकों के निर्णय जिन चरों के प्रभाव में घटित होते हैं, उन्हें समझने के लिए उनके विश्वासों का अध्ययन भी महत्वपूर्ण है। इसके मूल में आधारभूत मान्यता यह है कि अध्यापकों के अभ्यास का मूल्यांकन केवल औपचारिक और वस्तुनिष्ठ शिक्षणशास्त्रीय ज्ञान के सापेक्ष नहीं किया जा सकता। उनके द्वारा लिए जाने वाले निर्णय ऐसे कारकों के भी प्रतिफल होते हैं, जो उनकी सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से उपजते हैं, जो उनके एक विशेष प्रकार के समाजीकरण के प्रतिफल होते हैं। उनके लिए शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि निरपेक्ष

न होकर सापेक्ष होती है, जो शिक्षार्थियों के प्रति उनकी अभिवृत्ति को निर्धारित करती है। वे अपनी संस्कृति विशेष के अनुरूप 'अध्यापक' होने की पहचान से ढके होते हैं और उसके अनुरूप 'नौकरी' करते हैं (टर्नर, क्रिस्टीन और मेयर 2009)।

अध्यापकों के विश्वासों को उनकी व्यक्तिनिष्ठ धारणाओं का एक ऐसा दृष्टिकोण माना जा सकता है, जिसके द्वारा वे शिक्षा, शिक्षण और शिक्षार्थियों को देखते हैं। अध्यापकों के विश्वास किसी भी विषय में उनके व्यक्तिगत मत को प्रकट करते हैं, जिनका प्रमाणिक होना आवश्यक नहीं होता है। ये विश्वास अचानक विकसित नहीं होते हैं, इन पर औपचारिक ज्ञान, चर्चा एवं संवाद के प्रभाव के साथ-साथ लंबे समय तक अवलोकन एवं भागीदारी तथा परिवेशजन्य कारकों का भी प्रभाव पड़ता है। अध्यापकों के विश्वास व्यक्तिनिष्ठ होते हैं (टर्नर, क्रिस्टीन और मेयर 2009)। इनका मूल्यांकन ज्ञान की तरह तथ्यपरक और प्रमाण आधारित कसौटियों पर नहीं किया जा सकता है (पार्वट, 1992)। ये व्यक्ति की विचारधारा, दीर्घकालिक समाजीकरण और पेशेवर संस्कृति के प्रतिफल होते हैं (नथहाल, 2004)। ये अदृश्य तरीके से व्यक्ति के निर्णयों को प्रभावित करते हैं और उसमें प्रतिबिंबित होते हैं। इन्हें बदलना चुनौतीपूर्ण कार्य होता है (टर्नर और मेयर, 2009)। इस कारण ये शैक्षिक सुधारों के प्रमुख बाधक हैं (ब्रिंकमैन, 2015)। अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों में शामिल होने से पूर्व ही अध्येताओं में शिक्षा, शिक्षार्थी और शिक्षा प्रक्रिया से संबंधित विश्वास निर्मित हो चुके होते हैं (कालरा और बावेजा, 2009)। अध्यापक अपने विश्वासों को

सत्य मानते हैं। वे उसके समर्थन में तर्क भी प्रस्तुत करते हैं। इस सैद्धांतिक पृष्ठभूमि के आलोक में यह माना जाता है कि शैक्षिक सुधारों को साकार करने के लिए यह आवश्यक है कि अध्यापकों के विश्वासों पर शोध अध्ययन किया जाए। इस प्रकार के शोध अध्ययन अध्यापकों के चिंतन और शिक्षणशास्त्रीय अभ्यासों को समझने में सहयोग करेंगे।

इसी दिशा में भारतीय अध्यापकों के संदर्भ में क्लार्क (2003) द्वारा एक महत्वपूर्ण शोध अध्ययन किया गया है। उन्होंने शैक्षिक सुधारों के प्रति सेवारत अध्यापकों की विचार प्रक्रिया का अध्ययन किया और पाया कि शैक्षिक सुधारों के प्रति अध्यापकों में सकारात्मक स्वीकृति होती है। वे परंपरागत शिक्षण से भिन्न रूप में सुधारों को स्वीकार करते हुए गतिविधि आधारित सीखने के उपयोग के लिए तत्पर रहते हैं। वे सरकार द्वारा दी गई जिम्मेदारियों को निभाने के प्रति विशेष रूप से सचेत रहते हैं और उसी के अनुरूप अपने पेशेवर दायित्वों का भी निर्वहन करते हैं। इस दौरान उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि और बच्चों की सामाजिक पृष्ठभूमि में अंतर या समानता का प्रभाव अध्यापकों के निर्णयों पर पड़ता है। ब्रिंकमैन (2015) ने महाराष्ट्र, केरल और बिहार राज्य के अध्यापकों को भागीदार बनाते हुए अध्यापकों के शिक्षार्थी-केंद्रित शिक्षणशास्त्र के प्रति विश्वासों का अध्ययन किया। इस अध्ययन में पाया गया कि अध्यापकों की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, उनकी विचारधारा आदि जैसे कारक अध्यापकों के चिंतन और अभ्यास को प्रभावित करते हैं। उन्होंने यह भी पाया कि अध्यापकों को सेवा-पूर्व अध्यापन के दौरान हुए अनुभव भी उनके अभ्यास को प्रभावित

करते हैं। सेवारत अध्यापक की भूमिका में विद्यालय का परिवेश, कार्यसंस्कृति भी उनके विश्वासों में परिलक्षित होती है। उन्होंने यह भी पाया कि जिन अध्यापकों का विश्वास *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या* की *रूपरेखा 2005* के सिद्धांतों के अनुरूप है, वे कक्षा में इस दस्तावेज में सुझाए गए सुधारों का क्रियान्वयन अधिक प्रभावशाली ढंग से करते हैं। इस शोध अध्ययन के भागीदार अध्यापकों में व्यापक विश्वास पाया गया कि जो शिक्षार्थी वंचित पृष्ठभूमि से आते हैं, वह सीखने में भी कमजोर होते हैं। अध्यापकों के व्यवहार और विचारों में यह पाया गया कि वे कक्षा में स्वयं को नेतृत्वकर्ता की स्थिति व सत्ता को बनाए रखने के लिए अनुशासन के पक्षधर हैं।

कुमार और सुब्रमण्यम् (2015) ने गणित अध्यापकों पर किए शोध अध्ययन में पाया कि ये अध्यापक कक्षा में गणितीय नियमों और प्रक्रियाओं पर अधिक ध्यान देते हैं, जबकि इबारती सवालों का संदर्भ प्रस्तुत करने को महत्वपूर्ण नहीं मानते हैं। इस अध्ययन के भागीदार अध्यापकों का मानना था कि गणित शिक्षण का लक्ष्य गणित के नियमों को सिखाना है। अध्यापकों ने यह भी बताया कि वे विद्यालय द्वारा निर्धारित पुस्तकों के माध्यम से ही पढ़ाना पसंद करते हैं। इन अध्यापकों के समूह को जब सेवारत अध्यापक कार्यक्रम के माध्यम से शिक्षार्थी-केंद्रित शिक्षण की ओर उन्मुख किया गया तो उनके शिक्षण में कुछ प्रमुख बदलाव देखे गए। उन्होंने गणितीय नियमों को विभिन्न संदर्भों में प्रयुक्त करना आरंभ किया। उनमें यह आत्मविश्वास आया है कि वे शिक्षण सहायक सामग्रियों का विकास कर सकते हैं। उन्होंने शिक्षार्थियों को भागीदारी के अवसर

प्रदान करने की दिशा में भी महत्वपूर्ण कदम उठाए। सिंगला और अन्य (2017) ने चेन्नई के नगरीय अध्यापकों और कांचीपुरम के ग्रामीण अध्यापकों को भागीदार बनाकर शोध अध्ययन किया। इस अध्ययन में उन्होंने पाया कि यद्यपि अध्यापक निर्माणवादी सिद्धांतों से परिचित हैं, लेकिन वे कक्षा में इनका अभ्यास नहीं करते हैं। उनका कक्षा शिक्षण निगरानी और अनुशासन के आधार पर पाठ को पूरा करने के उद्देश्य से होता है। उनकी कक्षाओं में शिक्षार्थियों द्वारा सवाल पूछने और समूह कार्य आदि के प्रयोग जैसी प्रवृत्तियों का भी अभाव पाया गया।

जोशी (2011) ने अपने शोध अध्ययन में विज्ञान के अध्यापकों के परिप्रेक्ष्य का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि अध्यापक *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* में परिभाषित विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों के अनुसार विज्ञान को जिज्ञासा, कल्पना और खोजी प्रवृत्ति के सापेक्ष देखते हैं। वे कक्षा में कुछ सीमा तक गतिविधि आधारित अधिगम का प्रयोग भी कर रहे हैं, लेकिन कक्षा में अंततः बेहतर परीक्षा परिणामों को ही महत्व दिया जा रहा है। वे विज्ञान में शिक्षार्थियों की वैकल्पिक अवधारणाओं और उनकी चुनौतियों के समाधान पर न के बराबर ध्यान दे रहे हैं। कालरा और बवेजा (2010) के शोध अध्ययन के अनुसार सेवा-पूर्व अध्यापक कक्षा में उसी तरह व्यवहार करते हैं जैसे उनके विद्यालय जीवन में उनके अध्यापक व्यवहार किया करते थे। सेवा-पूर्व अध्यापक मानते हैं कि उनमें अध्यापक बनने के गुण और अभिवृत्ति पहले से उपस्थित है और वे अपने साथी अध्यापकों से बेहतर हैं। अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र (फील्ड) कार्यक्रमों के

दौरान उनके विश्वास प्रायः असंबोधित रह जाते हैं। वे अपने शिक्षार्थियों को 'तेज' और 'मंद' जैसे वर्गों में परिभाषित करते हैं। वे इस बात को चिह्नित करते हैं कि कौन-से शिक्षार्थी कक्षा प्रबंधन में सहयोग कर रहे हैं और कौन-से शिक्षार्थी कक्षा में बाधा उपस्थित कर रहे हैं। वे सहायक सामग्रियों के प्रयोग को महत्व देते हैं। सेवा-पूर्व अध्यापक कक्षा में प्रभावपूर्ण शिक्षण के लिए शिक्षार्थियों की तत्परता को एक महत्वपूर्ण घटक मानते हैं, जिसे वे विद्यालय की संस्कृति और शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि से संबंधित मानते हैं।

शोध उद्देश्य एवं विधि

इस शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य थे—

- अध्यापकों की शिक्षा के उद्देश्य विषयक विश्वासों की व्याख्या करना।
- अध्यापकों के विद्यालय, समुदाय और शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि विषयक विश्वासों का विश्लेषण करना।
- अध्यापकों के कक्षा के अधिगम परिवेश संबंधित विश्वासों की व्याख्या करना।

इस शोध अध्ययन में न्यादर्श के रूप में दिल्ली महानगर में वर्ष 2019–20 में संचालित निजी विद्यालयों के 40 अध्यापकों का चयन स्नोबॉल प्रतिचयन विधि द्वारा किया गया था। ये विद्यालय पूर्वी दिल्ली और पश्चिमी दिल्ली जिलों में स्थित हैं। शोध के भागीदार (में चयनित) अध्यापकों की न्यूनतम अकादमिक योग्यता स्नातक और सेवा-पूर्व अध्यापक शिक्षा थी। इनमें से 23 अध्यापकों ने बीएल.एड. किया था और 17 अध्यापकों ने बी.एड. किया था। इन अध्यापकों का न्यूनतम शिक्षण अनुभव पाँच वर्ष था। इन अध्यापकों में 25

महिला अध्यापिकाएँ और 15 पुरुष अध्यापक थे। इन अध्यापकों के विश्वासों की पड़ताल के लिए शोधार्थी द्वारा साक्षात्कार किया गया था। प्रत्येक साक्षात्कार 40-50 मिनट का था। ये साक्षात्कार भागीदारों की सुविधानुसार हिंदी और अंग्रेजी भाषा में किए गए। साक्षात्कार के लिप्यांतरण के बाद उनका विषय-वस्तु विश्लेषण किया गया।

तथ्यों का विश्लेषण

शोधार्थी द्वारा संकलित तथ्यों का विश्लेषण विस्तार से बिंदुवार किया गया, जो इस प्रकार है—

शिक्षा का लक्ष्य

अध्यापक, शिक्षा के लक्ष्यों की जिस दृष्टि से व्याख्या करते हैं, उसी के अनुरूप वह कक्षा गतिविधियों का आयोजन करते हैं। इस शोध अध्ययन में भी भागीदार अध्यापकों के शिक्षा के लक्ष्य से संबंधित विश्वास प्रकट हुए। यह पाया गया कि भागीदार अध्यापकों ने शिक्षा के लक्ष्य और विद्यालय की भूमिका को एक-दूसरे के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त किया। शोधार्थी द्वारा अध्यापकों के शिक्षा के लक्ष्य से संबंधित विचारों को तीन वर्गों में रखा जा सकता है—मूल्यों का पोषण करना, सामाजिक और नागरिक जीवन के लिए तैयारी और सामाजिक गतिशीलता के लिए शिक्षा।

1. *मूल्यों का पोषण करना*—शोध के भागीदार अध्यापकों ने शिक्षा की सर्वप्रमुख भूमिका शिक्षार्थियों में मूल्यों का पोषण बताया। इसके लिए उन्होंने ‘संस्कार’, ‘मनुष्यता’, ‘नागरिक’, ‘सुसंस्कृत’ और ‘सभ्य’ जैसे शब्दों का भी प्रयोग किया। अध्यापकों का यह मानना था कि उनके शिक्षार्थी, जिन परिवारों से आते हैं उनमें से

अधिकांश की पृष्ठभूमि मध्यमवर्गीय है, इस कारण उन्हें जीविका को लेकर अपेक्षाकृत कम चिंता रहती है, लेकिन अभिभावक चाहते हैं कि उनके बच्चे सुसंस्कृत एवं मूल्यवान नागरिक बनें। अध्यापकों का इससे आशय मूल्यों के पोषण से था। अध्यापकों ने अभिभावकों के मत व्यक्त करते हुए कहा कि वे भी चाहते हैं कि उनके शिक्षार्थी बड़े-बुजुर्गों का सम्मान करें, सत्य बोले, ईमानदार बनें, विनम्र हों, अच्छे व बुरे का भेद कर सकें। उल्लेखनीय है कि अध्यापकों ने परिवार और विद्यालय के बीच अंतर करने के लिए इन्हीं मूल्यों को प्रमुख आधार भी बताया। उदाहरण के लिए, एक अध्यापक का मानना था कि, “हमारे बच्चे जिन परिवारों से आते हैं, के परिवार पढ़े-लिखे हैं, सीखने के संसाधन और सुविधाएँ भी हैं, लेकिन विद्यालय उन्हें औपचारिक शिक्षा के द्वारा मूल्यों से तथा संस्कारों से युक्त करता है।” इसी तरह एक अन्य अध्यापक का कहना था कि, “इन बच्चों को क्या कमी है? इनके पास सबकुछ है। फिर भी, हमारा काम है कि हम उन्हें संस्कारों की शिक्षा दे सकें। बच्चों को ज्ञात है कि बड़े-छोटे के साथ कैसा व्यवहार करना है।” एक अध्यापक का कहना था कि, “शिक्षा ही बच्चों को बता सकती है कि दुनिया में मूल्य ही वास्तविकता है। हमें ईमानदार, सत्यनिष्ठ और अनुशासित होना चाहिए। हमें एक-दूसरे के साथ भाईचारे से रहने की भी शिक्षा देनी है।” अध्यापकों के उक्त विचारों से स्पष्ट है कि वे मूल्यों के माध्यम से बच्चों में वयस्कों की सत्ता की स्वीकृति का बोध पैदा करना चाहते हैं। वे मूल्यों को ऐसे प्रारूप के रूप में देख रहे हैं, जिसके माध्यम से बच्चों की स्वछंदता को सहजीवन के रूप में ढाला जा सके। इसके द्वारा

वे 'अच्छे मनुष्य' के निर्माण के लक्ष्य को भी प्राप्त करना चाहते हैं। यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि अध्यापकों के इन विश्वासों का मूल, शिक्षार्थियों की मध्यमवर्गीय सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमि और इसके अनुरूप अभिभावकों की आकांक्षा है, जहाँ 'सुसंस्कृत' होने को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है।

2. सामाजिक और नागरिक जीवन के लिए— शिक्षा के लक्ष्यों पर चर्चा करते हुए अध्यापकों ने बच्चों को वयस्क से अलग मानते हुए उन्हें अपरिपक्व माना। उन्होंने शिक्षा को समाजीकरण का साधन मानते हुए, शिक्षा द्वारा सामाजिक और नागरिक जीवन की तैयारी के लक्ष्य पर विश्वास प्रकट किया। तैयारी की इस प्रक्रिया में बच्चों को 'अनुशासित' बनाना एक प्रमुख घटक था। भागीदार अध्यापकों के अनुसार उनके विद्यालयों के बच्चों को घर पर स्वतंत्र परिवेश मिलता है। माता-पिता उन्हें भौतिक सुख-सुविधाएँ पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराते हैं। घर पर किसी भी तरह के सख्त अनुशासन का अभाव होता है, इस कारण बच्चों में आलस्य, लापरवाही, पढ़ाई को गंभीरता से न लेने, काम को टालते रहने आदि की समस्याएँ पैदा हो जाती हैं। इसके समाधान के लिए शिक्षा, विद्यालय और अध्यापकों का दायित्व है कि वह शिक्षार्थियों को 'अनुशासन का पाठ' पढ़ाए। उदाहरण के लिए, दो अध्यापकों के वक्तव्य दिए गए हैं, जैसे—

“हमें बच्चों को विषय का ज्ञान सिखाने के लिए अधिक मेहनत नहीं करनी है। इसमें तो घर और ट्यूटर सहयोग करते हैं। हमें तो उन्हें बताना है कि वे कक्षा में कैसे बैठें और रहें? कक्षा के नियमों का पालन कैसे करें? खुद को कैसे व्यवस्थित रखें आदि।”

“अनुशासन के द्वारा हम उनकी ऊर्जा को सही दिशा देने का कार्य करते हैं। स्कूल की यह भूमिका उसे घर से अलग करती है। बच्चे को यह मालूम होना चाहिए कि पढ़ने के समय पढ़ना है और खेलने के समय ही खेलना है।”

अध्यापकों की इस तरह की प्रतिक्रियाएँ यद्यपि स्व-अनुशासन की ओर संकेत करती हैं, लेकिन इसमें 'भय' के तत्व भी देखे जा सकते हैं। इस प्रकार के अनुशासन पर अधिक बल देने से शिक्षा शिक्षार्थी के लिए एक व्यावहारवादी प्रशिक्षण बनकर रह सकती है। यह प्रवृत्ति शिक्षार्थियों के स्वतंत्र और मननपूर्ण चिंतन को बाधित करती है। उन्हें ऐसे नागरिक के रूप में विकसित करती है, जो स्वभावतः दी गई परिस्थितियों को स्वीकार कर लेते हैं। अतः उक्त संदेह को इस तथ्य से बल मिलता है कि जहाँ-जहाँ अध्यापकों ने अनुशासन की बात की है, वहाँ-वहाँ इसे सभ्य नागरिक बनने के गुण से भी जोड़कर देखा है। लेकिन वे नागरिकता के साथ आलोचनात्मक चिंतन के स्थान पर आज्ञापालक और नियमों के पालनकर्ता की भूमिका पर अधिक बल दे रहे थे। उनके लिए नागरिक बनना और अनुशासित होना एक-दूसरे के समतुल्य हैं, जिसे वे सामाजिक जीवन के लिए शिक्षार्थियों की तैयारी के रूप में देखते हैं।

3. सामाजिक गतिशीलता के लिए शिक्षा— इस शोध अध्ययन में भागीदार अध्यापकों का मानना था कि शिक्षा बेहतर जीवन के लिए संसाधनों को अर्जित करने की क्षमता प्रदान करती है। इसके अंतर्गत उन्होंने बेहतर जीवन को जीविका के साधनों के सापेक्ष समझाया। यहाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि अध्यापकों का मानना था कि उनके बच्चे जिस

तरह की पृष्ठभूमि से आते हैं, वे जीविका तो कमा लेंगे। अतः शिक्षा के द्वारा जीविका के साधनों की गुणवत्ता में सुधार होना चाहिए। इस सुधार के लिए उन्होंने क्षेत्रीय सामाजिक गतिशीलता का संदर्भ दिया। उदाहरण के लिए, जिन बच्चों के अभिभावकों की 'दुकानें' हैं, वे चाहते हैं कि उनके बच्चे सेवा क्षेत्र के प्रतिष्ठित व्यवसाय को अपनाएँ, जो अभिभावक सरकारी नौकरी में हैं, वे 'प्रतिष्ठित सरकारी' सेवा में बच्चों को भेजना चाहते हैं। ऐसे ही शिक्षा के द्वारा प्रतिष्ठित परीक्षाओं, जैसे— आई.आई.टी. और नीट की तैयारी पर भी बल दिया गया। इसके लिए अध्यापकों ने इक्कीसवीं सदी के कौशलों पर भी चर्चा की। अध्यापकों ने बताया कि इन कौशलों को ध्यान में रखते हुए पिछले कुछ वर्षों से पाठ्यचर्या संबंधित गतिविधियों में नई तरह की परियोजनाओं एवं शिक्षण-अधिगम गतिविधियों को जोड़ा गया है। बच्चों की रुचियों के पोषण के लिए उनकी रुचि, कला, शिल्प और खेल से जुड़ी गतिविधियों को प्राथमिकता दी जा रही है।

समकालीन प्रवृत्तियों का प्रभाव

इस शोध अध्ययन के कुछ अध्यापकों ने शिक्षा के लक्ष्यों पर चर्चा करते हुए 'वैश्विक नागरिकता', 'शाश्वत विकास', 'पर्यावरण अनुकूल व्यवहार' जैसे लक्ष्यों की भी चर्चा की। यद्यपि इस तरह का विचार व्यक्त करने वाले भागीदारों की संख्या कम थी, फिर भी उनके विचार समाज की समकालीन चुनौतियों और उभरती प्रवृत्तियों के बीच शिक्षा की नई भूमिका के प्रति जागरूकता को व्यक्त करते हैं। उदाहरण के लिए, एक अध्यापक का कहना था कि, "अब हमें विश्व-नागरिक के बारे में सोचना चाहिए।

शिक्षार्थियों को बताना चाहिए कि पूरी दुनिया का हित एक साथ रहने में है और यह काम केवल शिक्षा के द्वारा ही हो सकता है।" अध्यापक अपने विचारों के संदर्भ में वैश्वीकरण के प्रसार और इसके सकारात्मक व नकारात्मक पक्षों पर भी प्रकाश डालते हैं। इसी तरह एक अन्य अध्यापक का मानना था कि शाश्वत विकास वाली शिक्षा ही आने वाली पीढ़ी को सुख एवं शांतिपूर्ण जीवन दे सकती है। उन्होंने बताया कि इसी दृष्टिकोण के आधार पर प्रत्येक विद्यालय में अब जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय आपदा जैसी समस्याओं को गंभीरता से पढ़ाया एवं समझाया जा रहा है।

अतः अध्यापकों के उक्त मतों का विश्लेषण करने पर कह सकते हैं कि निजी विद्यालयों में पढ़ाने वाले अध्यापकों के शिक्षा के लक्ष्यों से संबंधित विश्वासों पर शिक्षार्थियों की मध्यमवर्गीय पृष्ठभूमि का सर्वाधिक प्रभाव है। इसी कारण, वे विद्यालय की ज्ञान प्रदान करने वाली भूमिका के सापेक्ष मूल्य और अनुशासन की भूमिका को अधिक महत्व दे रहे हैं। इन्हीं संदर्भों में वे घर और विद्यालय के परिवेश में अंतर भी कर रहे हैं। यहाँ उल्लेखनीय है कि वे शिक्षा द्वारा जीविका का साधन देने की तुलना में सांस्कृतिक पूँजी देने के प्रति आग्रही हैं। उनके अनुसार शिक्षा का लक्ष्य भौतिक संसाधनों को एकत्रित करने की योग्यता प्रदान करना, सामाजिक पहचान और सत्ता से निकटता की सुविधा प्रदान करना है।

घर और परिवार का अधिगम परिवेश

इस शोध अध्ययन के भागीदार अध्यापकों का विश्वास था कि शिक्षण और अधिगम में घर और

परिवार के अधिगम परिवेश की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भागीदार अध्यापक शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि से भली-भाँति परिचित थे। अध्यापकों ने अपने-अपने विद्यालयों के शिक्षार्थियों की पारिवारिक पृष्ठभूमि पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए अभिभावकों की व्यावसायिक संलग्नता, परिवारों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, घरों के भौतिक संसाधन तथा वृहद् सामाजिक संबंधों के जाल का उल्लेख किया। अध्यापकों ने शिक्षार्थियों के घरों पर संसाधनों की उपलब्धता को शिक्षण में सहायक माना। अध्यापकों ने बताया कि परियोजना कार्य के लिए प्रिंट आउट लेना हो, सजावट की सामग्री की व्यवस्था करनी हो, कला और शिल्प के कार्य करने हो, इन सभी में अभिभावकों का सहयोग मिलता है। अध्यापकों का विश्वास था कि अभिभावकों का शिक्षित होना शिक्षार्थियों के अधिगम में योगदान देता है—

“अभिभावक अपने बच्चों की पढ़ाई पर ध्यान देते हैं। वे उनके गृहकार्यों और परियोजना कार्यों में सक्रिय योगदान करते हैं।”

अतः स्पष्ट है कि भागीदार अध्यापक, अभिभावकों से विद्यालयी गतिविधियों में सहायक की भूमिका की अपेक्षा करते हैं। इसके साथ-साथ अध्यापकों ने यह भी बताया कि जो अभिभावक अपने व्यवसाय के कारण बच्चों की पढ़ाई पर ध्यान नहीं दे पाते हैं, उन्होंने अपने बच्चों के लिए ट्यूटर की व्यवस्था कर रखी है। अध्यापकों ने यह भी कहा कि भले ही वे पढ़ाई में प्रत्यक्ष सहयोग नहीं करते, लेकिन पी.टी.एम. (अभिभावक-अध्यापक बैठक) में नियमित उपस्थित होते हैं। अध्यापकों ने इसी संदर्भ में बताया कि उनके यहाँ अभिभावक बच्चों

की प्रगति के बारे में सचेत रहते हैं। वे बच्चे की अकादमिक उपलब्धि, विद्यालय की गतिविधियों एवं अध्यापक-शिक्षार्थियों के संबंध के बारे में अभिभावकों से बात करते हैं। अध्यापकों ने इस बारे में संतुष्टि व्यक्त करते हुए कहा कि अभिभावक, अध्यापकों की मेहनत की सराहना करते हैं। भागीदार अध्यापकों द्वारा इस तथ्य पर विशेष बल दिया गया कि अभिभावक बच्चों की पढ़ाई के साथ अन्य शैक्षिक गतिविधियों में उनकी सहभागिता पर भी ध्यान देते हैं।

अध्यापकों का यह भी विश्वास था कि शिक्षार्थी अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि के कारण कक्षा में विषयों को पढ़ने और सीखने के लिए तैयार रहते हैं। उनके पारिवारिक अनुभव शिक्षार्थियों के दैनिक जीवन के ज्ञान में योगदान करते हैं। इसका उदाहरण देते हुए शिक्षार्थियों द्वारा छुट्टियों में की जाने वाली यात्राओं, घर पर पत्रिकाओं एवं समाचार-पत्रों की सुलभता तथा विज्ञान परियोजना से जुड़ी खेल सुविधाओं की उपस्थिति का उल्लेख किया गया। अध्यापकों के अनुसार घर पर टीवी और इंटरनेट की सुविधा का होना, परियोजना को पूर्ण करने में सहायक होता है। अध्यापकों ने यह भी बताया कि अभिभावकों द्वारा बच्चों को उनकी रुचि के अनुसार नृत्य, गायन, वादन और कला जैसे कौशलों के विकास पर भी बल दिया जाता है। इन गतिविधियों को वे शिक्षार्थियों के समग्र विकास से जोड़कर देखते हैं, जिसमें घर के अधिगम परिवेश की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इसी के अनुरूप अध्यापकों का यह भी तर्क था कि जहाँ सरकारी विद्यालयों में विषय ज्ञान और परीक्षा महत्वपूर्ण होती है, वहीं निजी विद्यालयों में घर का परिवेश बच्चों की

भाषा और सामान्य ज्ञान के विकास में योगदान देता है। अध्यापक घर के अधिगम परिवेश में सामाजिक संबंधों का भी उल्लेख करते हैं। ये संबंध शिक्षार्थियों की सांस्कृतिक पूँजी का स्रोत हैं। इनसे अभिभावकों की शिक्षा से जुड़ी अपेक्षाएँ और आकांक्षाएँ प्रभावित होती हैं।

शिक्षार्थियों की विविधता

इस शोध अध्ययन में अध्यापकों से शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि पर चर्चा के दौरान, उनका मुख्य ध्यान अभिभावकों की मध्यमवर्गीय पृष्ठभूमि पर था। परिवारों की इस पृष्ठभूमि में समरूपता के कारण अध्यापकों ने उनकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अंतर्गत केवल क्षेत्रीय विविधता को ही संज्ञान में लिया। भागीदार अध्यापकों ने जाति, जेंडर और धार्मिक विविधता पर कोई चर्चा नहीं की। परंतु शिक्षार्थियों के परिवारों का दिल्ली में प्रवासन कब हुआ? इसे अध्यापकों द्वारा संज्ञान में लिया गया। इसी के सापेक्ष वे विद्यार्थियों की सांस्कृतिक विविधता और समरूपता की व्याख्या करते हैं। उदाहरण के लिए, एक अध्यापक ने इस कारक के प्रभाव को विस्तार से समझाया, “कक्षा में कुछ शिक्षार्थी ऐसे होते हैं जिनका परिवार पिछले कुछ वर्ष पूर्व दिल्ली में प्रवास पर आया है, तो वे विद्यार्थी कक्षा में अपनी संस्कृति के तत्वों को समाविष्ट करते हैं। जबकि यदि परिवार लंबे समय से दिल्ली में रह रहा है, तो बच्चे ‘दिल्ली’ की महानगरीय संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हैं। इससे सांस्कृतिक समरूपता आती है।” ऐसे ही प्रवासन पर आधारित सांस्कृतिक विविधता का उदाहरण अन्य अध्यापकों ने भी दिया। एक अध्यापक ने बताया कि उनकी कक्षा में केंद्र सरकार

के कर्मचारियों के बच्चे पढ़ते हैं, जो अलग-अलग राज्यों से प्रवास कर दिल्ली आए हैं, इसलिए उनकी कक्षा में सांस्कृतिक विविधता है। एक अन्य अध्यापक ने बताया कि उनकी कक्षा के शिक्षार्थियों की क्षेत्रीय विविधता का प्रमाण उनके द्वारा हिंदी के प्रयोग में दिखाई देता है। क्षेत्रीय विविधता को जिन अध्यापकों ने रेखांकित किया, उसे वे संसाधन के रूप में देखते हैं। इन अध्यापकों ने बताया कि वे ध्यान रखते हैं कि कक्षा में बच्चों के बीच क्षेत्रीय विविधता के आधार पर किसी भी प्रकार की रूढ़ियाँ या पूर्वाग्रह व्याप्त न हों और न ही किसी शिक्षार्थी का बहिष्करण हो। इस संदर्भ में एक अध्यापक ने बताया कि उनकी कक्षा में एक दक्षिण भारत का शिक्षार्थी था। उसे कक्षा के कुछ शिक्षार्थी अपने समूह में शामिल नहीं कर रहे थे। परंतु कक्षा अध्यापिका के हस्तक्षेप से उन्होंने उस शिक्षार्थी को कक्षा की गतिविधियों में शामिल करना प्रारंभ कर दिया।

सांस्कृतिक विविधता के अतिरिक्त सभी अध्यापकों ने माना कि प्रत्येक शिक्षार्थी में सीखने की क्षमता होती है। उनकी अधिगम शैली और अधिगम उपलब्धि में भिन्नता होती है। इसके अतिरिक्त अध्यापकों ने रुचि, अभिक्षमता और अभिवृत्ति जैसे व्यक्तिनिष्ठ विविधता के कारकों पर चर्चा की। शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि में व्याप्त भिन्नता के उक्त प्रत्यक्षण के कारण अध्यापकों का विश्वास था कि एक अच्छा अध्यापक वह है जो केवल प्रतिभाशाली शिक्षार्थियों पर ध्यान केंद्रित न करे, बल्कि वह सभी शिक्षार्थियों की शैक्षिक आवश्यकताओं पर ध्यान दे। इन अध्यापकों का यह भी मानना था कि हमारी ओर से समान इनपुट देने पर भी शिक्षार्थियों में उपलब्धि

की भिन्नता का कारण उनका पढ़ाई पर ध्यान देना और 'परिश्रम' करना भी है। उदाहरण के लिए, यहाँ पर भागीदार अध्यापकों के कुछ उद्धरण इस प्रकार हैं— “जो कक्षा में जितना ध्यान देता है, उतना ही सफल हो सकता है। हम सभी को एक जैसा पढ़ाते हैं।”

“अच्छे अंक लाने के लिए अच्छे परिवार से होना या सुविधाओं का होना ही पर्याप्त नहीं है। खुद भी मेहनत करनी पड़ती है। मेरी कक्षा में दोनों तरह के शिक्षार्थी हैं जो पढ़ाई के महत्व को समझते हैं और पढ़ते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो ऐसा नहीं करते हैं।”

“मैं ऐसा तो नहीं कहती हूँ कि बच्चे सीख नहीं सकते हैं। जो बच्चे पढ़ाई में अधिक ध्यान देते हैं, वे सफल होते हैं। जो कम ध्यान देते हैं वे थोड़ा पीछे रह जाते हैं। मुझे ऐसा लगता है कि जिन्हें हम ‘बदमाश’ कहते हैं वे बुद्धि में तेज होते हैं लेकिन पढ़ाई पर ध्यान नहीं देते हैं।”

अध्यापकों के उपर्युक्त विचारों से स्पष्ट है कि शिक्षार्थियों का अधिगम करने में सक्षम होने के बावजूद भी उनके लिए शिक्षार्थियों की अधिगम उपलब्धि शिक्षार्थियों के वर्गीकरण का एक मुख्य आधार है। इसके लिए वे अभ्यास और अवधान जैसे कारकों को भी मानते हैं। ‘मेहनत’ करने से आशय यदि सूचनाओं को याद करना या रहना रहा, तो यह शिक्षण के व्यावहारवादी उपागम को बल देगा। इसी तरह यह भी विचारणीय है कि ‘मेहनत करने’ को किन संज्ञानात्मक क्रियाओं के रूप में परिभाषित किया जाता है। अध्यापकों के इन विचारों में पुनरुत्पादनवादी सिद्धांतों की प्रतिध्वनि सुनाई देती है, जहाँ वे मध्यमवर्गीय परिवार के बच्चों को पुनः मध्यवर्गीय व्यवस्था के लिए तैयार कर रहे हैं।

अध्यापक और शिक्षार्थी संबंध

अध्यापकों का मानना था कि शिक्षार्थियों के साथ उनका संबंध शिक्षण की दशा एवं दिशा को निर्धारित करने में मुख्य भूमिका निभाता है। भागीदार अध्यापकों के विश्वासों में अध्यापक-शिक्षार्थी संबंध के तीन प्रारूप देखने को मिले— सुरक्षित और विशिष्ट महसूस कराने वाला तदनुभूतिपूर्ण, पदानुक्रमिक संबंध और लोकतांत्रिक संबंध।

सुरक्षित और विशिष्ट अनुभव कराने वाला तदनुभूतिपूर्ण संबंध

इस शोध अध्ययन के भागीदार अध्यापकों ने इस बात पर बल दिया कि शिक्षार्थियों के साथ उनका संबंध ऐसा हो कि प्रत्येक शिक्षार्थी सुरक्षित अनुभव करे। इसके लिए अध्यापकों ने ‘केयर इन रिलेशनशिप’, ‘तदनुभूतिपूर्ण’, ‘माता-पिता जैसा संबंध’ आदि वाक्यांशों का प्रयोग किया। जिन अध्यापकों ने इस तरह के संबंध का उल्लेख किया उन्होंने शिक्षार्थियों के बारे में ‘प्यारे’, ‘मासूम’, ‘जिज्ञासु’ जैसे विशेषणों का उपयोग किया। इन अभिव्यक्तियों के मूल में अध्यापकों का विश्वास था कि उनका शिक्षार्थियों के साथ ऐसा स्वाभाविक संबंध होना चाहिए, जिससे शिक्षार्थी अपनी बात को कहने, सवाल को पूछने और कल्पनाओं व अनुभवों को साझा करने में झिझक महसूस न करें। शोध अध्ययन के भागीदार अध्यापकों ने इसके लिए विद्यालयों द्वारा की गई संस्थागत व्यवस्थाओं, जैसे— ट्यूटोरियल सिस्टम और मेंटॉरिंग सिस्टम का भी उल्लेख किया। इन प्रयासों से शिक्षार्थियों को अध्यापकों से अनौपचारिक संपर्क और चर्चा करने का अवसर मिलता है।

पदानुक्रमिक संबंध

अध्यापकों और शिक्षार्थियों के बीच समानता के बजाय वयस्क और बच्चों जैसा पदानुक्रमिक संबंध होना चाहिए। इस संबंध के पक्ष में तर्क देते हुए अध्यापकों का विश्वास था कि वे भी अभिभावकों जैसे बच्चों के हित में सोचते हैं, इसलिए उनका सम्मान होना चाहिए। अध्यापकों का मानना था कि सीखना सुनिश्चित हो इसलिए भी पदानुक्रम का रहना जरूरी है। उदाहरण के लिए—

“अगर हम बच्चों के दोस्त हो जाएँगे तो इससे कक्षा के निर्देशों के पालन में बाधा आएगी। कक्षा में पढ़ाई के बजाय मनमानी होगी।”

“शिक्षार्थियों को मानना चाहिए कि अभिभावकों की तरह अध्यापक भी उनके भले के लिए सोच रहे हैं।”

“कई बार देखा है कि शिक्षार्थी, अध्यापक के सख्त व्यवहार की शिकायत अपने घर पर करते हैं। वे अध्यापक से दोस्ती करना चाहते हैं लेकिन ऐसा संभव नहीं है। ऐसा होना सीखने की प्रक्रिया को बाधित करता है।”

“हालाँकि हमें तो यही बताया जाता है कि शिक्षार्थी-केंद्रित अधिगम के लिए शिक्षार्थियों से मित्र की तरह व्यवहार करना चाहिए। लेकिन हमारे यहाँ जिस पृष्ठभूमि के शिक्षार्थी आते हैं अगर उनके साथ हम सख्त नहीं होंगे तो वह बिलकुल नहीं पढ़ेंगे। हमें शिक्षार्थियों के साथ स्वतंत्रता और अनुशासन के बीच संतुलन बना कर चलना पड़ता है।”

इस तरह का विश्वास रखने वाले अध्यापकों ने कुछ उदारवादी जवाब भी दिए— “अध्यापक और शिक्षार्थी के बीच संबंध समय अनुसार बदलते रहते हैं। कभी हम उनके मित्र होते हैं, तो कभी अभिभावक।

जब वे अनुशासन भंग करेंगे, तो हमें अभिभावक की भूमिका में शक्ति से भी निपटना पड़ेगा और यदि उनके साथ हमें कोई परियोजना कार्य करना है, तो हम उनके साथ मित्र की तरह व्यवहार करते हैं।”

अध्यापकों के इन कथनों से स्पष्ट होता है कि अनुशासन की अपेक्षा पदानुक्रमिक संबंध मूल में है, जिसे पढ़ाई की अनिवार्य शर्त पर वैध करार दिया जा रहा है। अध्यापकों में इस तरह के विश्वास की उपस्थिति वृहद् सांस्कृतिक संदर्भ में अध्यापक और शिक्षार्थी के बीच की स्थिति को दर्शाता है। इस स्थिति के कारण शिक्षार्थियों द्वारा प्रश्न पूछना, संवाद करना जैसी प्रक्रियाओं की उपेक्षा होती है। इस तरह के विश्वास कक्षा में सीखने की स्वाभाविक प्रक्रिया में बाधा पहुँचाते हैं और भय का माहौल पैदा करते हैं। इसका उदाहरण एक अध्यापक के वक्तव्य में इस प्रकार है— “मेरी कक्षा में कोई अव्यवस्था उत्पन्न न हो इसलिए मैं विद्यार्थियों के लिए चरणबद्ध निर्देशों को लिखकर ले जाती हूँ। क्या-क्या, कैसे-कैसे करना है? कब जमा करना है? इसकी पूरी सूची कक्षा को उपलब्ध कराती हूँ। ऐसे ही कुछ अध्यापकों ने बताया कि वे बच्चों को ग्रेड कम करने, किसी परियोजना में शामिल न करने आदि की धमकियाँ भी देते हैं।

लोकतांत्रिक संबंध

इस शोध अध्ययन में अध्यापकों ने यह भी माना कि बच्चों को अध्यापकों का भय नहीं होना चाहिए। यह अध्यापकों का दायित्व है कि वे बच्चों के साथ मिलकर कक्षा में सहज परिवेश का निर्माण करें। इस तरह का विश्वास रखने वाले अध्यापकों ने बताया कि शिक्षार्थी कक्षा में सहज महसूस करें, इसके लिए वे शिक्षार्थियों को चर्चा के लिए आमंत्रित करते हैं।

उन्हें अपने अनुभवों को कहने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। इस विचारधारा के अध्यापकों का यह भी मानना था कि अगर हम डर आधारित अनुशासन का पालन करेंगे, तो इससे सम्मान पैदा होगा, लेकिन बच्चे अध्यापक से दूर हो जाएँगे। इससे बच्चा केवल परीक्षा केंद्रित भी हो सकता है। इस संदर्भ में अध्यापिका का अनुभव उल्लेखनीय है। उनका मानना था कि कक्षा में बच्चों के निर्णयों को भी सम्मान मिलना चाहिए। इसके लिए वे कई बार बच्चों के साथ मिलकर परियोजना को डिजाइन करती है। बच्चों को भी कक्षा का नियम निर्धारित करने के लिए कहती है। एक अध्यापिका का कहना था कि यदि मेरी कक्षा में शोर हो रहा है, तो मैं खुद से भी सवाल करती हूँ कि क्या मेरी पढ़ाने की विधि में कोई समस्या है? या हर बार समस्या बच्चे में हो जरूरी नहीं है, कई बार हम अध्यापकों को भी विचार करना चाहिए।

कक्षा का अधिगम परिवेश

इस शोध अध्ययन के अध्यापकों का अधिगम परिवेश संबंधी विश्वास, शिक्षार्थी-केंद्रित शिक्षण के अनुरूप था। अध्यापकों ने सेवा-पूर्व अध्यापक शिक्षा के अनुभवों के आधार पर अपने शिक्षण अभ्यासों की विवेचना की। भागीदार अध्यापकों का मानना था कि शिक्षार्थी-केंद्रित और आनंद आधारित अधिगम प्रक्रियाओं में अधिगम सहायक सामग्रियों की प्रमुख भूमिका होती है। इस कारण वे अपने शिक्षण को 'रुचिकर' बनाने के लिए अधिगम सहायक सामग्रियों के प्रयोग पर बल देते हैं। इन अध्यापकों के लिए पुस्तकें प्रमुख सहायक सामग्री थीं। अध्यापकों ने अपने साक्षात्कार में

इस बात पर भी बल दिया है कि वे पुस्तक-केंद्रित शिक्षण के पक्षधर नहीं हैं। वे अधिगम बोझ के संदर्भ में भी पाठ्यपुस्तकों की चर्चा करते हैं। इसके उपाय स्वरूप कई अध्यापकों ने बताया कि उन्होंने समय-सारणी बनाई हुई है, जिसके अनुसार बच्चे पुस्तकें लाते हैं। शिक्षण में पाठ्यपुस्तकों के प्रयोग के बारे में अध्यापकों के अलग-अलग मत प्राप्त हुए। प्रथम वर्ग के अंतर्गत वे अध्यापक हैं जो रा.शै.अ.प्र.प. की पाठ्यपुस्तकों से सीधे पढ़ाते हैं। वे इन पाठ्यपुस्तकों को गतिविधि केंद्रित और शिक्षार्थियों के संदर्भ से जुड़ी हुई मानते हैं। इन अध्यापकों के अनुसार इन पाठ्यपुस्तकों का प्रयोग करना आसान है और वे इन्हें केंद्र में रखकर प्रकरण अनुसार शिक्षण करते हैं। अध्यापकों ने रा.शै.अ.प्र.प. की पाठ्यपुस्तकों की भाषा की भी सराहना की। उनका मानना था कि इन पाठ्यपुस्तकों में सरल शब्दों का प्रयोग किया गया है। इसे बच्चे अपने परिवेश से जोड़कर सीधे समझ सकते हैं। दूसरे वर्ग में ऐसे अध्यापक आते हैं जिन्होंने बताया कि वह सीधे-सीधे पाठ्यपुस्तकों का प्रयोग करने से बचते हैं, लेकिन जहाँ भी पाठ्यपुस्तकों के उदाहरण, अभ्यास और प्रयोग अनुकूल लगते हैं, वे उसका प्रयोग करते हैं। तीसरे वर्ग में वे अध्यापक आते हैं जो पाठ्यपुस्तक को कक्षाकार्य और गृहकार्य की सुगमता के लिए प्रयुक्त करते हैं।

इन अध्यापकों ने यह भी बताया कि प्राथमिक स्तर पर उनके विद्यालयों में जोड़ो ज्ञान और एकलव्य जैसी स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा तैयार किए गए पोस्टर, प्लेकार्ड, विज्ञान किट, गणितमाला आदि उपलब्ध हैं। इसका प्राथमिक कक्षाओं में उपयोग किया जाता है। उच्च प्राथमिक कक्षाओं के लिए अध्यापकों को

स्वयं शिक्षण सहायक सामग्री बनानी पड़ती है। इन अध्यापकों के साथ साक्षात्कार के दौरान यह भी ज्ञात हुआ कि अब अध्यापकों द्वारा ऑनलाइन ऑडियो-वीडियो सामग्री का प्रयोग अधिक किया जा रहा है। इसका कारण विद्यालयों में सूचना प्रौद्योगिकी की सुविधाओं का उपलब्ध होना है। कुछ अध्यापकों ने यह भी बताया कि वे रा.शै.अ.प्र.प. द्वारा तैयार की गई ई-सामग्री का प्रयोग भी करते हैं, कुछ अध्यापकों ने बताया कि वे बच्चों के घर में उपलब्ध सामग्रियों को अध्यापक सहायक सामग्री के रूप में उपयोग करते हैं, जैसे— बीज प्रकरण पढ़ाते समय राजमा के बीज और चने के बीज इत्यादि को बच्चों के घर से ही मंगवाया। ऐसे ही कुछ अध्यापकों ने यह भी बताया कि वे विद्यालय में उपलब्ध समाचार-पत्र एवं अन्य सामग्रियों के पुनर्चक्रण द्वारा शिक्षण सहायक सामग्रियों का विकास करते हैं। इस मत को व्यक्त करने वाले अध्यापकों का मानना था कि इन गतिविधियों द्वारा बच्चों को सीखने में आनंद आता है और कक्षा में उनकी सहभागिता भी बढ़ जाती है। इस शोध अध्ययन के भागीदार सभी अध्यापकों का मत था कि उनके विद्यालय के शिक्षार्थियों के लिए परियोजना कार्यों के लिए सहायक सामग्रियों का खरीदना कोई कठिन कार्य नहीं है। इस कारण वे कला एवं शिल्प आधारित परियोजना भी करवाते हैं।

इन अध्यापकों की बातचीत में एक आयाम यह भी उभरकर आया कि वे कक्षा की एकरसता को तोड़ने के पक्षधर हैं। इन अध्यापकों के अनुसार कक्षा की एकरसता सीखने में बाधक होती है। इसे तोड़ने के लिए इन भागीदार अध्यापकों ने अनेक उपाय बताए। जैसे एक अध्यापक ने बताया कि वह

कक्षा की एकरसता को तोड़ने के लिए बैठने की व्यवस्था को बदलते हैं। कक्षा को खेल के मैदान में ले जाकर गतिविधि कराते हैं। एक अध्यापक ने बताया कि वे कक्षा में खेल का आयोजन करते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि आवश्यक नहीं कि हर बार खेल विषय से संबंधित ही हो। लेकिन खेलों से कक्षा में पुनः ऊर्जा का संचार हो जाता है। कुछ अध्यापकों ने बताया कि कक्षा की एकरसता को तोड़ने के लिए पाठ्यपुस्तकों में दी गई गतिविधियाँ भी सहयोग करती हैं। इन गतिविधियों का एक अन्य लाभ बताते हुए भागीदार अध्यापकों ने बताया कि इसके माध्यम से अभिभावकों को भी पता चलता है कि उनके बच्चे कक्षा में क्या कर रहे हैं? जैसे—जब शिक्षार्थी कोई चित्र या पोस्टर बनाकर घर ले जाते हैं तो अभिभावक प्रसन्न होते हैं।

इस शोध अध्ययन के भागीदार अध्यापकों ने पाठ योजना निर्माण के प्रति उदासीनता व्यक्त की। उनका मानना था कि अनुभव के आधार पर वे प्रकरण को पढ़ाते हैं। पाठ के पहले ही तय करते हैं कि कक्षा का संचालन कैसे करना है। सभी भागीदार अध्यापकों ने लिखित रूप में कक्षाकार्य और गृहकार्य की अनिवार्यता पर बल दिया। इन अध्यापकों ने कक्षा में 'गतिविधि' को महत्वपूर्ण बताया। अध्यापकों के अनुसार वे ऐसी गतिविधियों का चुनाव करते हैं, जो बच्चों के दैनिक अनुभवों से जुड़ी हों, जो रुचिकर एवं अभिप्रेरित करने वाली हों, कक्षा प्रबंधन को बाधित न करें, जिसके लिए अधिक संसाधनों की आवश्यकता न हो, जिससे कोई अन्य उद्देश्य, जैसे—जेंडर जागरूकता, पर्यावरण जागरूकता आदि पूर्ण हों।

निष्कर्ष और निहितार्थ

इस शोध अध्ययन के द्वारा दिल्ली के निजी विद्यालयों में अध्यापन कर रहे अध्यापकों के शिक्षा, शिक्षण और शिक्षार्थी संबंधित विश्वासों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। शोध के भागीदार अध्यापकों के विश्वासों की व्याख्या बताती है कि वे शिक्षा के उद्देश्यों को शिक्षार्थियों की सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमि के अनुरूप देखते हैं। उनके लिए शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य शिक्षार्थियों के समग्र विकास को 'अनुशासित' दिशा देना है। अध्यापकों के विश्वासों में बाल-केंद्रित शिक्षा के साथ-साथ शिक्षा और मूल्यबोध की गहनता को दर्शाया गया है। यह गहनता 'मूल्यों' को एक प्रारूप के रूप में देखती है, जो शिक्षार्थियों को 'नागरिक' बनाती है। यहाँ उल्लेखनीय है कि अध्यापकों ने मूल्यबोध को अनुशासनबोध के पर्याय के रूप में देखा है, जो शिक्षार्थियों की उपलब्धि को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख घटक है।

अध्यापकों का आग्रह इस तथ्य पर भी है कि शिक्षा द्वारा शिक्षार्थियों के समाजीकरण का लक्ष्य, उनका वयस्कों की दुनिया में अनुकूलन है। इस तरह के विश्वास शिक्षा को मध्यमवर्गीय सामाजिक-आर्थिक संरचना के पुनरुत्पादन का साधन बना देते हैं। इसी का परिणाम है कि भागीदार अध्यापकों ने शिक्षार्थियों की वैयक्तिक भिन्नता के संज्ञानात्मक और विद्यालयी उपलब्धि संबंधित आयामों को अधिक महत्व दिया है। वे अपने शिक्षार्थियों की मध्यमवर्गीय और महानगरीय पृष्ठभूमि को समरूप सांस्कृतिक समूह के रूप में देखते हैं। इस वर्ग की सामाजिक व आर्थिक विशेषताएँ शिक्षा को एक भिन्न अर्थ देती हैं जहाँ

शिक्षा का लक्ष्य सामाजिक गतिशीलता के साथ-साथ अनुशासित करना और सुसभ्य बनाना है।

इसका प्रभाव उनकी शिक्षणशास्त्रीय अवधारणाओं पर भी दिखाई देता है। इसी का परिणाम है कि विद्यालयी उपलब्धि के साथ-साथ अनुशासन पर अध्यापकों ने सर्वाधिक बल दिया है। अध्यापक बाल-केंद्रित शिक्षाशास्त्र से भली-भाँति परिचित हैं। इसमें वे शिक्षार्थियों के पारिवारिक अधिगम परिवेश को भी सहयोगी मान रहे हैं। लेकिन अनुशासन पर अति बल और बाल-केंद्रित शिक्षा के प्रति उत्साह का द्वंद्व निर्माणवादी शिक्षण में बाधा उत्पन्न कर रहा है। इसी का परिणाम है कि संबंधित अध्यापकों का विश्वास व्यावहारवादी अनुशासन और निर्माणवादी शिक्षण से युक्त है। यहाँ रेखांकित करने की आवश्यकता है कि अध्यापकों ने शिक्षार्थियों के सामाजिक संबंधों को एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में चिह्नित किया है, जो शिक्षार्थियों को अनुकूल अधिगम परिवेश प्रदान करता है। जिससे अध्यापकों को अपनी शिक्षण गतिविधियाँ संचालित करने में मदद मिलती है। वे ऐसी शिक्षण युक्तियों का प्रयोग करते हैं, जिनमें शिक्षार्थी अपने परिवेश के अनुभवों को शामिल करते हैं। लेकिन इनकी सीमा एक विशिष्ट सामाजिक-सांस्कृतिक समूह तक ही सीमित है। इसे अध्यापक 'शिक्षार्थी-केंद्रित उपागम' के एक संसाधन के रूप में देखते हैं। इसके परिणामस्वरूप शिक्षार्थी केवल मध्यमवर्गीय और नगरीय समाज की वास्तविकता से ही परिचित होता है।

इस शोध अध्ययन में पाया गया कि अध्यापक अपने शिक्षार्थियों के अनुभव जगत से परिचित हैं। वे शिक्षार्थियों को भावनात्मक सहयोग प्रदान करने, अभिप्रेरित करने, भविष्य के लिए मार्गदर्शन करने,

निगरानी और अवलोकन द्वारा व्यवहार परिमार्जन करने के प्रयत्न करते हैं। वे शिक्षार्थियों में व्यक्तिगत गुणों एवं क्षमताओं की सराहना और पोषण करते हैं। उन पर एक ओर विद्यालय में कार्य का बोझ है, तो दूसरी ओर अभिभावकों का सहयोग भी मिल रहा है। इस स्थिति में उनकी भूमिका ऐसे अभिकर्ता की बन रही है जो शिक्षार्थियों को 'आगे बढ़ाने' में लगे हुए हैं। वे विषय शिक्षण के दौरान बोध और व्याख्या के स्थान पर रुचि के पोषण पर बल देते हैं। वे विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिंतन के पोषण के बदले उनकी सीमित दुनिया के प्रति जागरूकता की सराहना करते हैं। ये प्रवृत्तियाँ निजी विद्यालयों के अध्यापकों के शिक्षणशास्त्रीय द्वंद्वों को उद्धाटित करती हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की संस्तुतियों का क्रियान्वयन आरंभ हो चुका है। इस शोध अध्ययन के परिणामों से स्पष्ट है कि शैक्षिक सुधारों को साकार करने के लिए नीति-निर्माताओं को विद्यालय स्तर पर अध्यापकों के विश्वासों और धारणाओं को संज्ञान में लेना होगा। यदि अध्यापकों के विश्वासों को संबोधित नहीं किया जाएगा तो वे शैक्षिक सुधारों को यांत्रिक ढंग से समझेंगे और उसका अभ्यास करेंगे। सेवारत और सेवा-पूर्व अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों में सहभागी शिक्षार्थी-शिक्षकों या अध्यापकों के विश्वासों एवं परिप्रेक्ष्यों को संबोधित करना चाहिए। विशेषकर सेवारत अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों में

अध्यापकों के विश्वासों को संबोधित करने के लिए क्या करना है? क्यों करें? को भी सम्मिलित किया जाए। उन्हें मनन और संवाद द्वारा खुद के अभ्यास पर विचार करने का अवसर दिया जाए। इससे उनमें स्वायत्तता बोध भी विकसित होगा और वे बदलाव के अभिकर्ता की भूमिका को चरितार्थ करेंगे। यहाँ पर यह भी ध्यान रखने की आवश्यकता है कि केवल शिक्षण की युक्तियों या शिक्षण सहायक सामग्रियों के निर्माण और उपयोग से शैक्षिक सुधार साकार नहीं होंगे, इसके लिए अध्यापकों के शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि और परिवेश से संबंधित विश्वासों और मान्यताओं को भी संबोधित करना होगा। अध्यापकों को सकारात्मक पेशेवर अभिवृत्ति में दक्ष करना होगा कि उनके द्वारा किया जा रहा शिक्षण सामाजिक बदलाव का माध्यम है। इसके लिए अध्यापकों को सतत पेशेवर विकास का अवसर दिया जाए। उनके द्वारा किए जा रहे कार्यों का आभार माना जाए। जो अध्यापक सराहनीय कार्य कर रहे हैं, उनके अनुभवों को साझा किया जाए। गतिविधि आधारित शिक्षण एवं लोकतांत्रिक कक्षा तथा विद्यालय और समुदाय के संबंध की घनिष्ठता को भी बढ़ाना होगा। इसके लिए अध्यापकों को शिक्षार्थियों के पारिवारिक और सामुदायिक जीवन से जुड़ने के उपाय व अवसर प्रदान करना होगा। इस तरह से अध्यापकों को शिक्षा में बदलाव के संवाहक के रूप में तैयार किया जा सकता है।

संदर्भ

- कालरा, एम.बी. और बी. बवेजा. 2010. स्टूडेंट टीचर्स थिंकिंग अबाउट नॉलेज, लर्निंग एंड लर्नर्स इन इंडिया. *लिटरेसी, इंफॉर्मेशन एंड कंप्यूटर एजुकेशन जर्नल*. 1 (1), पृष्ठ संख्या 33–45.
- कुमार, आर.एस. और के. सुब्रमण्यम्. 2015. फ्रॉम फालोइंग टू गोइंग बियांड द टेक्स्टबुक— इनसर्विस इंडियन मैथमैटिक्स टीचर्स प्रोफेशनल डेवलपमेंट फॉर टीचिंग इन्टीजर्स. *ऑस्ट्रेलियन जर्नल ऑफ टीचर एजुकेशन*. 40 (12), पृष्ठ संख्या 86–103.
- क्लार्क, पी. 2003. कल्चर एंड क्लासरूम रिफॉर्म— द केस ऑफ द डिस्ट्रिक्ट प्राइमरी एजुकेशन प्रोजेक्ट. *कंपैरेटिव एजुकेशन*. 39 (1), पृष्ठ संख्या 27–44.
- जोशी, नार्गुंड वी., ए. मेरेडिथ, पी. रोजर्स और वी. एक्सन. 2011. एक्सप्लोरिंग इंडियन सेकंडरी टीचर्स ओरिएंटेशन एंड प्रैक्टिस फॉर टीचिंग साइंस इन एन इरा ऑफ रिफॉर्म. *जर्नल ऑफ रिसर्च इन साइंस टीचिंग*. 48(6), पृष्ठ संख्या 624–647.
- टर्नर, जे.सी., ए. क्रिस्टीन, और डी.के. मेयर. 2009. टीचर्स बिलीफ्स अबाउट स्टूडेंट लर्निंग एंड मोटीवेशन. संपादन में एल.जे. साहा और ए.जी. ड्वाक्रिन (संपादक). *इंटरनेशनल हैंडबुक ऑफ रिसर्च ऑन टीचर्स एंड टीचिंग*. पृष्ठ संख्या 361–371.
- नथहाल, जी. 2004. रिलेटिंग क्लासरूम टीचिंग टू स्टूडेंट लर्निंग— ए क्रिटिकल एनालिसिस ऑफ व्हाई रिसर्च हैज फेल्ड टू ब्रिज द थियरी-प्रैक्टिस गैप. *हार्वर्ड एजुकेशनल रिव्यू*. 74, पृष्ठ संख्या 273–306.
- पार्वट, आर. 1992. टीचर्स बिलीफ अबाउट टीचिंग एंड लर्निंग— ए कन्स्ट्रक्टिविस्ट पर्सपेक्टिव. *अमेरिकन जर्नल ऑफ एजुकेशन*. 100, पृष्ठ संख्या 354–395.
- ब्रिंकमैन, एस. 2015. लर्नर सेंटर्ड एजुकेशन रिफॉर्म इन इंडिया— द मिसिंग पीस ऑफ टीचर्स बिलीफ्स. *पॉलिसी फ्यूचर्स इन एजुकेशन*. 13 (3), पृष्ठ संख्या 342–359.
- सिंघला, एन., डी. पेडर्ब, डी. माल्थिस, एम. सन्मुगम, एस. मानिकवासगम और एम. गोविंदारा. 2017. इनसाइट्स फ्रॉम एक्टिविटी बेस्ड लर्निंग क्लासरूम इन तमिलनाडु, इंडिया— टीचर्स पर्सपेक्टिव एंड प्रैक्टिसिज. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशनल डेवलपमेंट*. 60, पृष्ठ संख्या 165–171.